भारत में धर्म और राजनीति: सामाजिक समरसता पर प्रभाव

Hament Malav

Assistant Professor, Political Science
Government College, Chechat, Kota

परिचय

भारत एक बहुधार्मिक और बहुसांस्कृतिक देश है, जिसकी विविधता विश्वभर में अद्वितीय मानी जाती है। यहां हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी और अन्य धर्मों के अनुयायी सह-अस्तित्व के साथ रहते हैं। यह सांस्कृतिक विविधता न केवल भारतीय सभ्यता की गहराई को दर्शाती है, बल्कि इसकी सहिष्णुता और सामाजिक समरसता की परंपरा को भी उजागर करती है। भारतीय समाज का यह ताना-बाना विभिन्न धर्मों और संस्कृतियों के बीच आपसी आदान-प्रदान और सामंजस्य का परिणाम है।हालांकि, यह विविधता कई बार सामाजिक और राजनीतिक चुनौतियों का कारण भी बन जाती है। धर्म, जो मूलतः आध्यात्मिकता और सामाजिक नैतिकता का आधार है, जब राजनीतिक उद्देश्य से प्रयोग किया जाता है, तो यह समाज में विभाजन और तनाव का कारण बन सकता है। धर्म और राजनीति का यह संबंध ऐतिहासिक और समकालीन भारतीय संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ऐतिहासिक रूप से, धर्म का उपयोग सत्ता और समाज पर प्रभाव डालने के लिए किया गया है, और समकालीन राजनीति में भी यह एक प्रभावी उपकरण बना हुआ है।

यह शोध पत्र इसी द्वंद्वात्मक संबंध का गहन विश्लेषण करता है। यह इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे धर्म का राजनीतिक उपयोग सामाजिक समरसता को प्रभावित करता है। साथ ही, यह उन अवसरों और चुनौतियों की पहचान करने का प्रयास करता है, जो इस संबंध से उत्पन्न होती हैं। भारतीय राजनीति और समाज की इस जटिल संरचना को समझना आज के संदर्भ में अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह न केवल वर्तमान सामाजिक-राजनीतिक परिदृश्य को आकार देती है, बल्कि भविष्य की दिशा भी तय करती है।

धर्म और भारतीय राजनीति का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारतीय राजनीति में धर्म का प्रभाव समय के साथ परिवर्तित हुआ है और विभिन्न ऐतिहासिक कालखंडों में इसे भिन्न रूपों में देखा गया है। प्राचीन भारत में धर्म और राजनीति का गहरा संबंध था। राजा धर्मशास्त्रों और धार्मिक परंपराओं के संरक्षक माने जाते थे। सम्राट अशोक का शासनकाल इस संदर्भ में एक उल्लेखनीय उदाहरण है, जहां उन्होंने बौद्ध धर्म को न केवल राज्य धर्म के रूप में अपनाया, बल्कि अहिंसा, दया और समाज कल्याण के सिद्धांतों को राज्यनीति का आधार बनाया। उनके शिलालेखों और स्तंभों में धार्मिक सहिष्णुता और समाज सुधार की झलक मिलती है, जो तत्कालीन राजनीति और धर्म के गहरे जुड़ाव को दर्शाते हैं।

मध्यकाल में, भारतीय राजनीति में धर्म का प्रभाव और भी जटिल हो गया। इस काल में एक ओर अकबर जैसे शासक थे, जिन्होंने धार्मिक सहिष्णुता को बढ़ावा दिया और "दीन-ए-इलाही" जैसे उदारवादी प्रयोग किए, तो दूसरी ओर औरंगज़ेब जैसे शासक थे, जिनकी नीतियों में धार्मिक असहिष्णुता स्पष्ट रूप से दिखाई दी। इस काल में धार्मिक सहिष्णुता और असहिष्णुता के बीच का द्वंद्व भारतीय समाज और राजनीति पर गहरा प्रभाव डालता रहा।

औपनिवेशिक काल में, धर्म और राजनीति का मेल एक नई दिशा में चला गया। ब्रिटिश शासन ने "फूट डालो और राज करो" की नीति के माध्यम से धर्म को राजनीति के केंद्र में ला दिया। उन्होंने धार्मिक और सांप्रदायिक विभाजन को बढ़ावा देकर अपने औपनिवेशिक शासन को मजबूत किया। इस नीति के प्रभावस्वरूप 1905 में बंगाल विभाजन और बाद में 1947 में भारत का विभाजन हुआ। इस अवधि में सांप्रदायिकता एक राजनीतिक हथियार बन गई, जिसने समाज में गहरी दरारें पैदा कर दीं।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान, धर्म एक बार फिर राजनीतिक विमर्श के केंद्र में था। महात्मा गांधी ने धर्म का उपयोग सामाजिक और राष्ट्रीय एकता के लिए किया। उनके लिए धर्म का अर्थ सभी धर्मों के प्रति समान आदर और सहिष्णुता था। उन्होंने सत्य, अहिंसा और सर्वधर्म समभाव के सिद्धांतों को राष्ट्रीय आंदोलन का आधार बनाया। इसके विपरीत, मुस्लिम लीग और हिंदू महासभा जैसे संगठनों ने धर्म को राजनीतिक विभाजन के उपकरण के रूप में उपयोग किया, जिसने अंततः भारत के विभाजन को जन्म दिया।

इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से स्पष्ट होता है कि भारतीय राजनीति में धर्म हमेशा एक महत्वपूर्ण कारक रहा है। कभी यह समाज को एकजुट करने का माध्यम बना, तो कभी विभाजन का कारण। यह द्वंद्व आज भी भारतीय राजनीति और समाज पर अपनी छाप छोड़ता है, जिससे धर्म और राजनीति के संबंधों का विश्लेषण अत्यंत प्रासंगिक हो जाता है।

स्वतंत्र भारत में धर्म और राजनीति का समागम

स्वतंत्रता के बाद भारतीय संविधान ने धर्मनिरपेक्षता को अपने मूल सिद्धांतों में स्थान दिया। यह एक ऐसा दृष्टिकोण था जो सभी धर्मों के प्रति समानता और धार्मिक स्वतंत्रता को सुनिश्चित करता था। हालांकि, व्यावहारिक राजनीति में धर्म की भूमिका धीरे-धीरे एक प्रभावशाली उपकरण के रूप में उभरी। स्वतंत्र भारत में धर्म और राजनीति के बीच यह समागम जटिल और बहुआयामी रहा है।

धर्मनिरपेक्षता के बावजूद, भारतीय राजनीति में धर्म का प्रभाव प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से दिखाई देता है। चुनावों के दौरान धार्मिक प्रतीकों, नारों, और मुद्दों का उपयोग राजनीतिक दलों द्वारा व्यापक स्तर पर किया गया। धर्म आधारित दल, जैसे भारतीय जनता पार्टी और शिरोमणि अकाली दल, धर्म को अपनी राजनीतिक पहचान और एजेंडे का केंद्रीय तत्व बनाते हैं। इसके अलावा, धर्मनिरपेक्ष दल भी धार्मिक संगठनों और समुदायों से समर्थन प्राप्त करने के लिए धर्म का उपयोग करते रहे हैं।

1980 और 1990 के दशक में राम जन्मभूमि आंदोलन इस प्रवृत्ति का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। इस आंदोलन ने भारतीय राजनीति में धर्म को एक निर्णायक मुद्दे के रूप में स्थापित किया। बाबरी मस्जिद विध्वंस ने देश के सांप्रदायिक ताने-बाने को गहराई से प्रभावित किया और राजनीतिक परिदृश्य में धार्मिक ध्रुवीकरण को जन्म दिया। इस घटना ने न केवल सांप्रदायिक हिंसा को बढ़ावा दिया, बल्कि इसे राजनीतिक लाभ प्राप्त करने के साधन के रूप में इस्तेमाल भी किया गया।सांप्रदायिक हिंसा और धार्मिक ध्रुवीकरण के माध्यम से राजनीति ने सामाजिक समरसता को चुनौती दी है। अल्पसंख्यक समुदायों की सुरक्षा और उनके अधिकारों के मुद्दे राजनीति के केंद्र में आ गए। इस संदर्भ में, धर्म आधारित आरक्षण, समान नागरिक संहिता, और धर्मांतरण के मुद्दे भी बहस का हिस्सा बने।धर्म और राजनीति का यह समागम स्वतंत्र भारत में न केवल चुनावी रणनीतियों और नीति निर्माण को प्रभावित करता है, बल्कि यह समाज में धार्मिक और सांप्रदायिक तनाव को भी बढ़ावा देता है। परिणामस्वरूप, धर्म के नाम पर राजनीतिक संघर्ष और विभाजनकारी नीतियों का उदय हुआ, जिसने भारतीय समाज की बहुलवादी और समरसता की परंपरा को चुनौती दी।

इन सबके बावजूद, भारतीय समाज की सहिष्णुता और बहुलवाद ने धर्म और राजनीति के इस जटिल संबंध को संतुलित करने का प्रयास किया है। यह आवश्यक है कि राजनीति धर्म का उपयोग सामाजिक एकता और न्याय के लिए करे, न कि विभाजन और सत्ता प्राप्ति के साधन के रूप में। धर्म और राजनीति के समागम को समझना और इसका संतुलित उपयोग सुनिश्चित करना भारतीय लोकतंत्र के लिए एक सतत चुनौती है।

सामाजिक समरसता पर प्रभाव

भारत में धर्म और राजनीति के अंतर्संबंध ने समाज पर गहरा प्रभाव डाला है। यह प्रभाव दो प्रकार का है—सकारात्मक और नकारात्मक, जो सामाजिक समरसता को प्रभावित करता है।

सकारात्मक प्रभाव: धर्म और राजनीति का सही और उद्देश्यपूर्ण उपयोग समाज में समरसता और सद्भाव को बढ़ावा दे सकता है। महात्मा गांधी जैसे नेताओं ने धर्म को सामाजिक सुधार और एकता के लिए उपयोग किया। गांधीजी ने अहिंसा, सत्य, और सामाजिक न्याय के सिद्धांतों को अपने राजनीतिक संघर्ष का आधार बनाया, जो विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक समूहों को एक मंच पर लाने में सहायक साबित हुआ। "सर्वधर्म समभाव" और धार्मिक सहिष्णुता के विचारों ने भारतीय समाज को उसकी विविधता में एकजुट रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

धार्मिक प्रेरणाओं से संचालित कई सामाजिक आंदोलनों ने अस्पृश्यता उन्मूलन, महिला सशक्तिकरण, और जातिगत भेदभाव के खिलाफ संघर्ष में योगदान दिया। धार्मिक सहिष्णुता और समावेशी नीतियां सामाजिक सौहार्द को प्रोत्साहित करती हैं और समाज में शांति और स्थिरता बनाए रखने में सहायक होती हैं।

नकारात्मक प्रभाव: धर्म का राजनीतिकरण, विशेष रूप से सत्ता और चुनावी लाभ के लिए, समाज में विभाजन और असमानता का कारण बन सकता है। जब राजनीतिक दल और नेता धर्म को अपने स्वार्थों के लिए इस्तेमाल करते हैं, तो इससे सांप्रदायिक तनाव और हिंसा की संभावना बढ़ जाती है।

धार्मिक कट्टरता और असहिष्णुता का प्रसार अक्सर समाज के विभिन्न वर्गों के बीच दुश्मनी और अविश्वास को बढ़ाता है। गोधरा कांड और उसके बाद की सांप्रदायिक हिंसा जैसे उदाहरण इस नकारात्मक प्रभाव को उजागर करते हैं। ऐसे घटनाक्रम न केवल सामाजिक समरसता को नुकसान पहुंचाते हैं, बल्कि समाज में स्थायी घाव भी छोड़ जाते हैं।इसके अतिरिक्त, धार्मिक प्रतीकों और भावनाओं का दुरुपयोग राजनीतिक विभाजन को गहरा करता है और अल्पसंख्यक समुदायों को हाशिए पर धकेलने का कारण बन सकता है। यह स्थिति न केवल सामाजिक ध्रुवीकरण को बढ़ावा देती है, बल्कि लोकतांत्रिक मूल्यों को भी कमजोर करती है।

धर्म और राजनीति का संबंध एक शक्तिशाली उपकरण हो सकता है, लेकिन इसका प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि इसका उपयोग किस उद्देश्य और पद्धति से किया जा रहा है। जब धर्म का उपयोग सहिष्णुता, शांति और सामाजिक न्याय के लिए किया जाता है, तो यह समाज को समरस बनाता है। इसके विपरीत, जब इसे विभाजनकारी राजनीति के लिए इस्तेमाल किया जाता है, तो यह सामाजिक समरसता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करता है। इसलिए, यह महत्वपूर्ण है कि धर्म और राजनीति का उपयोग समाज को जोड़ने और उसे प्रगति के मार्ग पर ले जाने के लिए किया जाए।

धार्मिक और राजनीतिक नेतृत्व की भूमिका

सामाजिक समरसता को बनाए रखने में धार्मिक और राजनीतिक नेतृत्व की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। राजनीति और धर्म, दोनों के नेतृत्वकर्ता समाज को दिशा देने में केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। यदि राजनीतिक नेता विभाजनकारी नीतियों को छोड़कर धार्मिक सहिष्णुता, विविधता में एकता और समानता के सिद्धांतों को प्रोत्साहित करें, तो समाज अधिक स्थिर, शांतिपूर्ण और प्रगतिशील बन सकता है। महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और डॉ. बी.आर. अंबेडकर जैसे नेताओं ने अपने समय में सामाजिक और धार्मिक समरसता को बनाए रखने के लिए ठोस प्रयास किए।

धर्मगुरु भी समाज पर गहरा प्रभाव डालते हैं। उनकी शिक्षाएं और संदेश उनके अनुयायियों की सोच और व्यवहार को आकार देते हैं। यदि धर्मगुरु प्रेम, सह-अस्तित्व और करुणा का प्रचार करें, तो वे समाज को जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। लेकिन जब धार्मिक नेता संकीर्ण विचारधाराओं को बढ़ावा देते हैं, तो यह समाज में विभाजन और तनाव पैदा कर सकता है।

आधुनिक संदर्भ में धर्म और राजनीति

आज के भारत में धर्म और राजनीति का संबंध अधिक जटिल और बहुआयामी हो गया है। संविधान के धर्मनिरपेक्षता के आदर्शों के बावजूद, राजनीति में धर्म का प्रभाव बना हुआ है। एक तरफ, प्रगतिशील विचारधाराएं और धर्मनिरपेक्षता का आग्रह सामाजिक समरसता को मजबूत करने की दिशा में कार्य कर रहे हैं। दूसरी तरफ, धार्मिक ध्रुवीकरण और सांप्रदायिक राजनीति सामाजिक ताने-बाने को कमजोर कर रहे हैं। सोशल मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म ने इस समस्या को और अधिक तीव्र कर दिया है। धार्मिक और राजनीतिक विचारधाराओं का तेज प्रसार, फर्जी खबरों और गलतफहमियों को जन्म देता है, जिससे समाज में तनाव और बढ़ जाता है। यह नई डिजिटल युग की चुनौतियों में से एक है, जहां धर्म और राजनीति के विचार बिना किसी निगरानी के व्यापक स्तर पर फैल रहे हैं।

समाज में संतुलन की आवश्यकता

धर्म और राजनीति के संबंध को संतुलित करना भारतीय समाज के भविष्य के लिए अनिवार्य है। सरकारों और राजनीतिक दलों को संविधान में निहित धर्मनिरपेक्षता के आदर्शों का पालन करते हुए नीतियां बनानी चाहिए। सभी धर्मों के प्रति समान दृष्टिकोण अपनाना और किसी भी प्रकार की धार्मिक पक्षपातपूर्ण राजनीति से बचना सामाजिक समरसता के लिए आवश्यक है।इसके साथ ही, नागरिक समाज, शैक्षिक संस्थान और मीडिया को धार्मिक सहिष्णुता, समावेशिता और सामाजिक एकता के संदेश को अधिकतम लोगों तक पहुंचाने में भूमिका निभानी चाहिए। सामाजिक संतुलन तभी संभव है जब धर्म और राजनीति के क्षेत्र में पारदर्शिता, नैतिकता और समावेशी दृष्टिकोण अपनाया जाए।धर्म और राजनीति दोनों को समाज के विकास और प्रगति के साधन के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि विभाजन और तनाव के उपकरण के रूप में। जब इन दोनों शक्तिशाली तत्वों का सही और संतुलित उपयोग किया जाएगा, तब ही एक समरस, शांतिपूर्ण और समृद्ध समाज का निर्माण हो सकेगा।

निष्कर्ष

भारत में धर्म और राजनीति का संबंध एक जटिल और संवेदनशील मुद्दा है, जो समाज के हर पहलू को प्रभावित करता है। धर्म, जहाँ एक ओर लोगों

को नैतिकता, सहिष्णुता और सामाजिक सद्भावना का पाठ पढ़ाने में सक्षम है, वहीं दूसरी ओर इसका राजनीतिकरण समाज में विभाजन, तनाव और असमानता को बढ़ा सकता है। स्वतंत्रता संग्राम से लेकर आधुनिक भारत तक, धर्म और राजनीति का यह द्वंद्व भारतीय समाज की वास्तविकता बना रहा है।भारतीय संविधान ने धर्मनिरपेक्षता और सभी धर्मों के प्रति समानता का सिद्धांत अपनाकर इस संबंध को संतुलित करने का प्रयास किया। फिर भी व्यावहारिक राजनीति में धर्म का उपयोग कई बार सामाजिक समरसता को चुनौती देता है। सांप्रदायिकता, धार्मिक ध्रुवीकरण, और वोट बैंक की राजनीति के कारण समाज में अविश्वास और तनाव पैदा होते हैं।हालांकि, जब धर्म और राजनीति का सही उपयोग होता है, तो यह समाज को एकीकृत करने और राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में सहायक होता है। महात्मा गांधी के आदर्शों ने यह सिखाया कि धर्म को सशक्तिकरण और समरसता के लिए कैसे प्रयोग किया जा सकता है। आज के संदर्भ में, यह आवश्यक है कि राजनीतिक दल और धार्मिक नेता समाज में शांति और सद्भाव को बढ़ावा दें। इसके अलावा, नागरिक समाज, शिक्षा प्रणाली, और मीडिया को धार्मिक सहिष्णुता और समावेशिता के मूल्यों को बढ़ावा देने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। धर्म और राजनीति के संतुलन से ही भारत अपनी बहुलतावादी संस्कृति और "विविधता में एकता" के आदर्श को बनाए रख सकता है। यदि धार्मिक और राजनीतिक नेता अपनी जिम्मेदारियों को समझें और समाज धर्म के सकारात्मक पहलुओं को अपनाए, तो भारत न केवल सामाजिक समरसता को बनाए रख सकता है, बल्कि एक अधिक न्यायसंगत, शांतिपूर्ण और प्रगतिशील राष्ट्र का निर्माण भी कर सकता है।

संदर्भ

1. बिपिन चंद्र, *भारत का स्वतंत्रता संग्राम*, पेंगुइन बुक्स, 2001।
2. रामचंद्र गुहा, *इंडिया आफ्टर गांधी*, पेंगुइन बुक्स, 2007।
3. सुगाता बोस और अरुण कुमार, *मॉडर्न साउथ एशिया: हिस्ट्री, कल्चर एंड पॉलिटिकल इकॉनमी*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2004।
4. के.एन. पाणिक्कर, *कम्युनलिज्म इन मॉडर्न इंडिया*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991।
5. एम.एन. रॉय, *भारतीय राजनीति का इतिहास*, ओरिएंट ब्लैकस्वान, 1985।
6. आशुतोष वर्मा, *भारतीय धर्म और राजनीति: एक अध्ययन*, वाणी प्रकाशन, 2010।
7. पी.एम. कुप्पुस्वामी, *सोशल चेंज इन इंडिया*, विकास पब्लिशिंग हाउस, 1972।
8. हरबंस मुखिया, द *मिडिवल इंडिया: हिस्ट्री एंड पॉलिटिक्स*, मैकमिलन पब्लिशिंग, 1982।
9. सरोज कुमार, *सांप्रदायिकता और भारतीय राजनीति*, राजकमल प्रकाशन, 2005।
10. सुशील कुमार, *धर्म और समाज का सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन*, प्रभात प्रकाशन, 2012।
11. महात्मा गांधी, *हिंद स्वराज*, नवरंग पब्लिशिंग हाउस, 1938।
12. रजनी कोठारी, *पॉलिटिक्स इन इंडिया*, ओरिएंट लॉन्गमैन, 1970।
13. सुमित सरकार, *मॉडर्न इंडिया: 1885-1947*, मैकमिलन, 1983।
14. ए.आर. देशपांडे, *इंडियन सोशियोलॉजिकल थॉट्स*, स्टर्लिंग पब्लिशर्स, 1990।
15. आर.एन. शर्मा, *सोसाइटी एंड पॉलिटिक्स इन इंडिया*, यूनिवर्सिटी प्रेस, 1985।
16. अली अशरफ और लता सिंह, *पॉलिटिक्स ऑफ कम्युनलिज्म*, पॉपुलर प्रकाशन, 2003।
17. सुभाष कश्यप, *भारतीय संविधान का परिचय*, नेशनल बुक ट्रस्ट, 2011।
18. टी.एन. मदन, *रिलिजन इन इंडिया*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991।
19. एरिक हॉब्सबाम, *नेशंस एंड नेशनलिज्म सिंस 1780*, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, 1990।
20. विक्रम सेठ, *सेक्युलरिज्म एंड सांप्रदायिक पॉलिटिक्स इन इंडिया*, समकालीन प्रकाशन, 2015।